भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष 14, अंक–9 गुरुवार, 26 सितं.' 91	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी सितम्बर, 1991	वार्षिक चन्दा–10.00 प्रति अंक : 1.00

आओ, हम 'योगी शताब्दी' मनायें........

योगी शताब्दी का मंगल वर्ष आ रहा है.....
तो,
प.पू. काकाश्री द्वारा स्वयं के हीरक महोत्सव (60वीं जन्म जयंती)
पर हमें पूछे नीचे के चार प्रश्नों पर
सतत् चौकन्नी निगाह रखकर
भीतर से टटोलें....
और
सुरुचि रखकर उसके मुताबिक वर्तने लग पड़े।
यही हमने
सच्ची योगी शताब्दी मनाई मानी जाएगी।

महाराज, स्वामी, ब्र.स्व. शास्त्रीजी महाराज, ब्र. स्व. योगीजी महाराज, गुरुहरि काकाजी महाराज और प्रत्यक्ष स्वरूपों इस हेतु हमें खूब बल दें–यही प्रार्थना !

''व्यवहारिक बुद्धि छोड़ कर–सचमुच,

- ☐ योगीजी महाराज को जो करना था उसके लिए हम तैयार (तत्पर) हैं?
- ☐ योगीजी महाराज का जो अभिप्राय था–जो भावना थी–वह हमारे दिल में अखंड रहती हैं?
- ☐ योगीजी महाराज की जो योजना थी कि पाँच पचास-दौ सौ जनों को तैयार करना–उसके लिए चौबीस घंटे में से एक घंटा दिल की सच्चाई से हमारा प्रयत्न (कोशिश) है?
- ☐ अन्दर-अन्दर दूसरों को उपदेश करते हैं–परामर्श देते हैं, पर वही स्वयं पर लागू करके हम वर्त पाते हैं?

–ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज

आई आई शरद्पूर्णिमा

हर युग में किसी न किसी कार्य कारण को लेकर प्रभु मानव स्वरुप में भारत की धरती पर अवतरित हुए हैं, परन्तु भगवान स्वामिनारायण सम्बन्ध में आये जीवों के कारण व महाकारण के भावों को टालकर ब्रह्मरूप करके आत्यांतिक मुक्ति देने एक अनोखी उदात्त कल्याण लेकर योजना मनुष्य रूप में धरती पर आये पर इससे भी अधिक, जीवों पर अत्यधिक करुणा करके स्वंय के रहने के धाम साकार ब्रह्म मू.अ.मू. गुणातीतानंदस्वामी को साथ में ही लाकर उनके द्वारा अमर गुणातीत भावना के रूप में वह पारमेश्वरी चेतना मानव स्वरुप में अखंडित रही और सभी को हमेशा के लिए 'सनाथ' कर दिए। इसलिए स्वामिनारायण सप्रदाय को'अखंड सुहागिन' सम्प्रदाय कहा जाता है।

पूर्ण पुरुषोत्तम श्री सहजानंद स्वामी के असली स्वरुप की तत्त्व से सम्यक् पहचान कराने, यथार्थ महिमा समझाने साकार ब्रह्म गुणातीतानंदस्वामी 'शरद्पूर्णिमा' के महामंगलकारी दिन पृथ्वी पर पधारे। जीव के मूल अज्ञान का नाश करके, देह रहते हुए उसे ब्रह्मरूप करके प्रभु प्रगटाने का भागीरथ कार्य 'गुणातीत' ने सिद्ध कर बताया।

श्रीजी महाराज ने तो यहाँ तक कह दिया कि **'अक्षर (अर्थात् गुणातीत) के बिना मेरा (पुरुषोत्तम का) प्रगटीकरण सम्भव ही नहीं है।'** वास्तव में अगर महाराज अपने साथ साकार ब्रह्म गुणातीतानंदस्वामी को पृथ्वी पर ना लाये होते तो महाराज का पृथ्वी पर आने का सारा परिश्रम विफल जाता। क्योंकि गुणातीत के सिवा और किसी की भी ऐसी दृष्टि नहीं थी जो महाराज के सम्यक् स्वरूप को पहचान कर उनकी महिमा समझा सकता की 'अक्षरधाम का अधिपति स्वयं साक्षात् स्वरुप में अवतरित हुआ है।'

मू.अ.मू. गुणातीतनन्दस्वामी स्वयं महाराज के धामरूप थे, परन्तु महाराज के प्रति अद्‌भुत प्रीति के कारण उनकी ओर ऐसी निगाह रख कर सेवा-भक्ति करी कि 500 परमहंसों के लिए तो पथ प्रदर्शक–आदर्श व अजोड़ साधु बने ही, लेकिन यावच्चन्द्रदीवाकरौ जीवंत जलती मशाल रख कर स्वामी सेवक भाव की राह को रोशन कर दिया और शास्त्रों में पूर्वोक्त कहे गये जप, तप, व्रत, योग, यज्ञ, दान आदि साधनों द्वारा प्रभु को राजी करने के उपायों पर सेरे लगा दिए। सेवा, भक्ति, निष्कामभाव, निर्मानीभाव आदि कल्याणकारी गुण तो स्वामिश्री को सहज ही सिद्ध थे, पर सरलता व स्वामी सेवकभाव की भक्ति द्वारा ही ऐसी प्रगट विभूति की प्रसन्नता पाई जा सकती है यूँ ब्रह्म विद्या की आसान नई प्रणाली की शुरुआत स्वामिश्री ने की.....अनन्त साधन करने के बावजूद इन्द्रियाँ अन्तःकरण का शुद्धिकरण नहीं हो पाता, जबकि प्रगट स्वरूप के प्रति केवल सद्‌भाव रखने मात्र से निर्वासनिक हो जाओ यह ज्ञान स्वामिश्री ने सचोट व स्पष्ट रूप से बताया। स्वामिश्री ने अक्षर पुरुषोत्तम की दृढ़ निष्ठा कराकर कईयों को एकांतिक धर्म सिद्ध कराया व गुणातीत ज्ञान का डंका बजा दिया....करीब 200 साल पहले कही उनकी बातें– महाराज के प्रति की उनकी निगाह के प्रसंग आज भी हरेक को अद्‌भुत मार्ग दर्शन, सही सूझ, सचोट समाधान व प्रेरणा देते हैं.....

स्वयं का सामर्थ्य जानते हुए भी स्वामिश्री एक सामान्य सेवक की अदा से ही जिए। महाराज की मूर्ति ही उनका जीवन था–प्राण थी।......रोम-रोम केवल 'महाराज महाराज' रटन करता था। महाराज की मूर्ति की एकमात्र झलक पाने स्वामिश्री का

आधी रात को बरसात में खड़े रहना महाराज के प्रति उनकी अद्‌भुत प्रीति का दर्शन कराता है..... स्वामिश्री का अनोखा सेवक भाव कई प्रसंगों से स्पष्ट होता है....

एक बार समूह में साधुओं का संघ जा रहा था। साधुओं के नए जूते होने के कारण चलने में पांव में तकलीफ हो रही थी। स्वामिश्री ने सभी संतों के जूते उतरवा कर एक गठरी में बांधे और सारे रास्ते वह गठरी सिर पर रख कर चले। एक बार अठारह साधु एक साथ बीमार पड़े तो उन अठारह साधुओं की चद्दरें भी धोई..... !! अपमान करने वालों को हार पहनाये और एकादशी के व्रत के दिन भूखे पेट संतों के बाजरा कटवाने वाले साबर कुंडला के निःसंतान मुखी को श्राप नहीं, आशीर्वाद रूप लड़का दिया !!! हमारी मन बुद्धि क्या ऐसे स्वामी सेवकभाव की कल्पना भी कर पायेगी?....धन्य-धन्य है गुरु गुणातीत को !

सद्. गुणातीतानन्द स्वामी के ऐसे असाधारण कार्यों व वर्तन से प्रसन्न होकर 1905 की साल में गढ़डा में बड़े-बड़े सद्‌गुरुओं व संतों की एक सभा में अनादि महामुक्त सद्. गोपालानन्द स्वामी ने प्रशंसा करते हुए कहा था कि–''**महंत तो खूब साधु बने हैं, परन्तु गुणातीतानन्द स्वामी जैसी महंताई किसी को भी करनी नहीं आई। कैसे? तो उन्होंने मंदिर पूरे किए, आचार्यों को राजी किए, सारे देश में सत्संग कराया, साधुओं को धर्म में रखा और अखंड भगवान की मूर्ति में रहकर कथावार्ता की और अनेकों को मोक्ष के मार्ग पर चलाया**''।

मू.अ.मू. गुणातीतानन्द स्वामी ने अपनी बातों में कहा है **आज तो मौज खुली रखी है और मौज का मूल्य नहीं होता।** मानव जाति को इससे बड़ी और क्या बक्शिश हो सकती है? आज गुणातीत स्वरूपों के रूप में वही गुणातीत परम्परा के वारिसदार हमें साक्षात मिले हैं। उनकी महिमा से सेवा करके, उनके सम्बन्ध वालों में खो जाना यही दो हाथ जोड़ कर करना है। तो, कोटि कल्प साधन करने पर भी जो सूक्ष्म के भाव टलते नहीं, ब्रह्म का सच्चा सुख हम नहीं भोग पाते–वह केवल उनकी पसन्द में वर्तने से प्राप्त हो जाएगा। तो आइये, शरद्‌पूर्णिमा के परम पवित्र अवसर पर हम सब यही प्रार्थना करें–हे गुरु गुणातीत ! आपके वारिसदारों का जैसा स्वरूप है वैसा हम पहचान पायें और आपका ऋण कभी न भूलें......सही अर्थ में आपके 'सरल' सेवक बनें !

गुणातीत समाज के इतिहास में 'शरद्‌पूर्णिमा' का दिन पहले से ही अपने आप में ही पूर्ण महिमा–गरिमा लिये हुए स्वर्णाक्षरों में अंकित था, लेकिन गुरुहरि योगीजी महाराज ने प्र.ब्र.स्व.प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी को इसी दिन साधु की भागवती दीक्षा देकर और अधिक सम्पूर्ण श्रृंगार कर दिया...... मानो 'गुणातीत' के प्रागट्‌य दिन पर ही गुणातीत परंपरा के वारिसदार को वारसा सौंपा।

गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा कहे गये दिल के निम्न उद्‌गार ही स्वामिजी (प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी) की महिमा का यथार्थ दर्शन कराते हैं... एक प्रसादी पत्र में गुरुहरि योगीजी महाराज ने लिखा था, **'प्रभुदासभाई (स्वामिश्री का पूर्वाश्रम का नाम) साधु होंगे तो समग्र ब्रह्मांड हिलेगा। प्रभुभाई साधु बनेंगे तो और 51 युवक दौड़ कर दीक्षा लेने आयेंगे। हरिप्रसादस्वामी आप अखंड याद आते हो। आपकी सेवा को धन्य है।**

पांच वर्ष आपने सेवा करी, निर्दोष बुद्धि से सेवा की है तो अखंड याद आते हो।'

गुरुहरि योगीजी महाराज के साथ स्वामिश्री का–गुरु शिष्य का–कैसा अनुपम सम्बन्ध होगा ? वह इन मार्मिक शब्दों से पता चलता है....हम सब

तो गुरु को याद करें, पर गुरु हमें याद करे–गुरु अपनी प्रसन्नता बताये वह कोई अलग कक्षा की–अलग सम्बन्ध की बात है।

स्वामिश्री जब से गुरुहरि योगीजी महाराज के संबंध में आये तब से ही पल-पल खूब छुपे रह कर, मौन रह कर गुरुहरि योगीजी महाराज का अद्‌भुत कल्पनातीत जीवन सतत् निहारा ही करते और बापा के प्रत्येक शब्द, सूत्र, अल्पवचन को खूब जाग्रत रह कर–विश्वास रख कर सत्य माना व बापा को राजी कर लेने की भावना से अधिक और कुछ प्यारा न रखा। आज स्वामिश्री की परावाणी में, सही अर्थ में 'साधु' की परिभाषा इस प्रकार है :–

- ❑ जड़ को चेतन करे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ तुम्हारे भयंकर से भयंकर बुरे प्रारब्धों को बदल कर तुम्हारे जीव का खूब भला कर दे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ लुटेरे के हाथ में माला दे दे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ वेश्या जैसी को सती होने की ताकत दे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ सड़े हुए दिमाग का और टूटे हुए दिल का रूपान्तर करे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ विधाता के लिखे भाग्य पर भी सेरे मार देवे (लेख पर मेख मारे) वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ कोटि कल्प में भी न टले ऐसे भयंकर प्रकृति और स्वभाव का परिवर्तन करके तुम्हें प्रभु का सच्चा पुत्र बना दे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ तुम उसकी कितनी भी उपेक्षा करो अथवा अपमान करो, उसकी अवगणना करो अथवा तिरस्कार करो, फिर भी अपने निर्व्याज और निरपेक्ष प्रेम के बहाव में डुबोकर सदा सुखी ही करे वो भगवान का पवित्र साधु।
- ❑ तुम्हारे अनन्त अपकारों को उपकार की तरह ही स्वीकारे और तुम्हारे कातिल जहर को पचा कर तुम्हें अमृत ही बक्शिश दे वो भगवान का पवित्र साधु।

जो 'साधु' की एसी परिभाषा दे सकता है वह पहले स्वयं ऐसा 'साधु' होगा ही न?

स्वामिश्री के जीवन में स्त्री, धन व मान का किंचित राग, संकल्प या आसक्ति का स्थान नहीं। उनकी दस इन्द्रियाँ, चार अन्तःकरण सहजानंद में ही निवास करती हैं। आज उनके संकल्प और कृपा दृष्टि से हजारों युवानों, संतों, बहनों, गृहस्थों भी शुद्ध, पवित्र, निर्व्यसनिक, निष्कामी व प्रभुमय जीवन जी रहे हैं। ऐसे स्वामिश्री की विरल प्रतिभा का शब्दों में क्या वर्णन करें.....?

मानव देह में पृथ्वी पर विचरते प्रभु के स्वरूप समान संतों के लीला चरित्र का माहात्म्यज्ञान, श्रवण, मनन, चिंत्वन–वही सुख, शांति व आनंद प्राप्त करने का सर्वोपरि उपाय है.....

गुरुहरि योगीजी महाराज के वारिसदार प.पू. पप्पाजी, प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी, प.पू. अक्षरविहारीस्वामी, प.पू. साहेब जैसे दिव्य पुरुष आज हमारे समक्ष हमें इस लोक और परलोक में सुखी करने की एकमात्र चाहना से, हमारे चैतन्य के विकास के लिए हम जैसे ही बन कर पृथ्वी पर विचरण कर रहे हैं और सौभाग्य से उन्होंने ही हमें सामने से ढूँढ कर ब्रह्म का सुख देने का सत्य संकल्प भी किया है। उनका जीवन, उनके चरित्र अगर हम ठीक से निहारेंगे तो हमें परम शांति मिलेगी और उनके लीला चरित्र निहार कर प्रसंगों, कथावार्ता, सुत्रों को निर्दोष बुद्धि (दिव्य भाव) रखकर विश्वासपूर्वक मान कर चलने की सुरुचि रखेंगे तो इसके फलस्वरूप हम भी निर्दोष, दिव्य और धन्य हो जायेंगे !!!

❑ ❑ ❑

‘ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी के मानसपुत्र......’

14 अक्तूबर–हमारे प्रभु प.पू. काकाजी के अत्यंत लाडले मानसपुत्र पू. दिनकर भाई की जयन्ती का शुभ पवित्र दिन.....

पू. दिनकरभाई यानि.....अमेरिका की धरती पर प.पू. काकाजी के द्वारा किया ‘अनुपम सर्जन’....अमेरिका जैसी भौतिक ऐश्वर्यों की चमक-दमक के स्पर्श मात्र से दूर व स्वयं में प्रभु प्रगटाये हुए प्रसन्नचित्त व्यक्तित्व......‘सच्चे अर्थ में साधु’। महिमा, सरलता, दासत्व का मूर्तस्वरूप यानि पू. दिनकर भाई। प.पू. काकाजी के मुख से कई बार हम सबने सुना था कि **‘वह (पू. दिनकरभाई) यहाँ से 6000 मील दूर हैं, लेनिक मेरे दिल में है और आप सब नजदीक रहते हो पर.....।** प.पू. काकाजी के कहे यह शब्द ही पू. दिनकरभाई के बारे की महिमा की स्पष्ट पहचान देते हैं। दृष्टि, संकल्प से सेने की बात यहां चरितार्थ होती है। पू. दिनकरभाई को जो-जो सिर्फ एक बार भी मिला है उसे जरूर उनमें प.पू. काकाजी की ही छवि का हूबहू दर्शन हुआ है.....वाणी में वैसी ही मिठास, निर्दोष हास्य, सरलता, सहजता, विनम्रता, सर्वदेशीयता, भेद दृष्टि रहित का जीवन......ऐसा ही लगता है जैसे किसी समर्थ शिल्पी ने फिदा होकर स्वयं का सम्पूर्ण नूर ही दे दिया हो। पू. दिनकरभाई को देखते ही प.पू. काकाजी द्वारा उनके बारे में कहे शब्द परम सत्य प्रतीत होते हैं। एक अद्‌भुत आनन्द व शीतलता अनुभव होती है.....आत्मीयता, वात्सल्य, अपनापन सहज लगता है। हर एक को लगे ही जैसे हमारी पुरानी पहचान हो। पू. दिनकरभाई के वर्तन को देख कर हर व्यक्ति के मुख से एक ही Sentence निकल पड़ता है **‘दिनकरभाई ने कुछ अलग रीत से पू. काकाजी का सेवन करा है।’**

पू. दिनकरभाई अमेरिका में Abott laboratory के Vice-President हैं....अच्छी Pay है....अत्यंत बुद्धिशाली पर तनिक भी intellect consciousness नहीं, केवल दासभाव ! Office में भी मन्दिर बना रखा है। कम्पनी में उनकी पवित्रता व साधुता का वर्तन को देखते हुए 'Holy Man' के नाम से सम्मानित किये गये हैं। गुरुहरि योगीजी महाराज कहते थे कि स्वयं का वर्तन ही बातें करता है.....यह पू. दिनकरभाई के जीवन से स्पष्ट दिखाई पड़ता है। दिल्ली में प.भ. मल्कानी साहब ने पू. दिनकरभाई की महिमा सुनी थी, पर जब वह अमेरिका में पू. दिनकरभाई को पहली बार मिले और संसार में रहते हुए उनकी साधुता, सरलता, विनम्रता देखी तो इतने अधिक प्रभावित हो गये कि दिल्ली वापस आने पर बोले कि **‘पू. दिनकरभाई के बारे में मैंने जो सुना था, वह तो खूब कम है। वह तो कोई अलग ही चीज हैं।’** फिर प.भ. मल्कानी साहब बोले कि 'Man like Dinkerbhai is yet to Come in my life.' पू. दिनकरभाई कैसे छा गये होंगे प.भ. मल्कानी साहब जैसे अति बुद्धिशाली व्यक्तित्व के दिलो दिमाग पर? इससे लगता है कि प.पू. काकाजी India में होते हुए भी ‘दिनकरभाई–दिनकरभाई’ क्यों करा करते थे। पू. दिनकरभाई अपना मन, बुद्धि, चित्त, महत्वाकाक्षाएं सर्वस्व सौंप कर काकाजीमय ही हो गये, तो प.पू. काकाजी भी स्वयं पूरे के पूरे अपने इस लाडले अनोखे पुत्र में समा गये....ऐसा लगता है कि प.पू. काकाजी को हम सम्यक् पहचान नहीं पाये, तो हम पर अत्यधिक करुणा करके वह पू. दिनकरभाई जैसे आदर्श पात्र

हमारे लिए रख गये हैं। सच ! पू. काकाजी की हम सबसे कैसी अद्‌भुत प्रीति होगी? प्रीति उन्होंने हमसे की या हमने उनसे? अभी भी हमारी चेतना का विकास व स्थूल पोषण भी उन्होंने अधूरा नहीं छोड़ा। प.पू. काकाजी को सुबह से शाम, पल-पल धन्यवाद-धन्यवाद ही कहने जैसा है कि अहो हो! आप हमें कैसी-कैसी अनुपम भेंट दे गये....? कैसे ऋण अदा कर पायेंगे?

पू. दिनकरभाई की जयन्ती के पवित्र दिन पर प्रार्थना करें....कि प.पू. काकाजी को तो हम हमारी नादानियों, भोलेपन व सयानेपन की वृत्तियों के कारण पहचान नहीं पाये; पर अब गुणातीत स्वरूपों के साथ वह भूल ना दोहरायें—आपने जैसे पू. काकाजी में स्वयं को खोकर उनके परिश्रम को साकार किया है—वही आपका वर्तन हमारे लिए आदर्श बने।

❑ ❑ ❑

सम्यक् स्वरूप दर्शन

सूक्ष्म बातें, वस्तुओं, समागम, अनुभव, सुख दर्शन अत्यन्त गूढ़ होता है और स्थिति के मुताबिक—भूमिका के मुताबिक जैसे शीशे में स्वयं का रूप जैसा का वैसा ही दिखाई पड़ता है, उसी प्रकार स्थूल, सूक्ष्म, शुद्ध व सम्यक् स्वरूप दर्शन भगवान का और भगवान से मिले साधु व एकांतिक हरिभक्त का होता है। भ्रम, बनावट, दम्भ (अभिमान) और कल्पनाओं से भरपूर कारण शरीर से हम अमायिक वस्तुएं देखना चाहते हैं, मानते हैं और अहम् का पोषण करते हुए ही दूसरों को जबरदस्ती मनवाते हैं। (सत्संग को) जानते ही न हों, हमारे contact में भी कभी न आये हों, सत्संगी भी न कहलाते हों उनसे भी हमारी यह स्थिति अधिक दयाजनक है और स्पष्ट है कि यह अज्ञानतापूर्वक कपट व बनावट ही है। यह समझ लेना जरूरी है, वर्ना बल नहीं ही आयेगा। आगे एक का अंक ही नहीं, तो और गिनती की बात ही कैसे? कल्याण के मार्ग पर चलते हुए कोटि (अनेक) भूमिकायें आती हैं। मनुष्यभाव में से गुण के भाव जाते हुए ब्रह्मभाव शुरू होता है और मूल ब्रह्म के संग एकत्व (एकता) को पाने से समागम करते हुए परब्रह्म का साक्षात दर्शन होता है। तब तक प्रकाश दिखाई पड़ता है, सिद्धियाँ आती है, समाधि होती है। त्रिकाल ज्ञानी भी बनें, पर तब भी वह अविभाज्य मुक्ति को पहुँचता नहीं है। और करने तो वही आये हैं, पर मन्दिरों में रह कर सेवा के बहाने सत्संगी कहलाकर जो स्वरूपनिष्ठा का द्रोह होता जाता है, उस महापाप में गिरते जाते हैं। अनजाने में भी यह होता रहता है और श्रीजी की रुचि—सिद्धान्त और गुणातीत ज्ञान, नजर अन्दाज कर दिया जाता है। स्वयं का मान, स्वयं की superiority complex और वासनाओं के जोश में साक्षात् स्वरूप में विचरते पू. योगीजी जैसे छुपे पहचाने ही न जायें। वे तो गुनाह माफ कर देते हैं, पर अपने प्रभु यह सहन नहीं ही कर लेंगे। नहीं समझेंगे तो एक या दूसरे प्रकार से उनकी मर्जी के मुताबिक वे वर्तायेंगे ही। यह देह उनकी मर्जी में रहे तो वे प्रसन्न, वर्ना मचेड़ के भी वे वर्ता के छोड़ेगे। तो उनके कहे मुताबिक उनके वचन में ही तत्पर क्यों न हो जायें? वचनामृत लोया-3, मध्य 11,13, वड़ताल 5-11, मध्य-9, अं.31, मध्य 54 के मुताबिक स्वरूपनिष्ठा की ऐसी दृढ़ता सिर्फ समागम से होती है।

प्रगट संतों के प्रसंगों में ऐसा समागम करके निष्ठा पक्की कर लेनी—यही प्रयोजन है। यह निष्ठा

ऊपर-ऊपर से स्थूल दर्शन दर्शन करने से, लाखों दंडवत करने से या करोड़ों, माला, प्रदक्षिणाओं या रुपयों की सेवा करने से दृढ़ होती ही नहीं।

– जब तक superiority complex जाता नहीं,

– जब तक मान रहित दासभाव की भक्ति और सेवा करते पू. योगीजी जैसे संतों के साथ गुणातीत ज्ञान प्रलय नहीं किया जाता और मायिक भाव टला नहीं,

– जब तक अलौकिकपन आता नहीं,

तब तक हमें वो सहला कर रखें, बुलायें, सेवा करायें, निभायें करें पर मुख्य बात वही है कि किस तरह यह बात जीव की समझ में आ जाये और स्वरूपनिष्ठा पक्की हो। सत्संग शिविरों में यही करना है। क्या हो रहा है? मन के क्या-क्या हवाई किले बना रहे हैं? कौन सी अतृप्त वृत्तियाँ–भावनाएं पूर्ण करनी हैं? दरअसल क्या करना चाहिए और क्या हो रहा है–वह तो तटस्थ होकर भीतर में मुड़कर देखने पर पता चले। तब ही समग्र रूप से उनकी शरण में जा पायेंगे और तब ही कृपा दृष्टि होगी। वह (कृपा) सच्चा दर्शन करायेगी और तभी बल, शांति, निर्भयता व भगवान के सुख की अनुभूति होगी। तब ही सत्संग में कहलाती निष्ठा वाले का भी गहराई में जो कुसंग है वो दूर होता है। इसके लक्षण वचनामृत में बतायें है उसका मनन, ध्यान और साक्षात्कार पू. योगीजी जैसे संत के समागम, प्रसंग करने से ही होता है और यही कर लें तभी सत्संग पहचानेंगे, समझेंगे। स्वरूपदर्शन–निष्ठा भी उनके निम्नलिखित दर्शन से ही प्रसंग बनते दृढ़ होती है और साक्षात दिखाई पड़ता है, अनुभव होता है। स्थूल को देखकर उसे परखो, परख कर विचारपूर्वक पहचानना। पहचान कर समग्र रूप से एकात्मभाव करना और फिर अनुभव के मुताबिक उसकी आज्ञा में रहना। तब ही ऐसा अनमोल सत्संग संभाल पाओगे और प्र.54 तथा मध्य 54 के मुताबिक सत्संग दृढ़ होगा और सत्संग में उसी की नींव अति दृढ़ मानी जाती है। जो जानता हो उसी को यह समझ आयेगा, वर्ना चिन्तामणि बालक के हाथ में ही है। उसे देखी भी बालक दृष्टि से ही है। अभी तो परखनी है–गुणानुगुण दूर करके **समझनी** है, फिर बुद्धि पूर्वक **निश्चय करना** और तब ही **पहचानी** मानी जाये। पहचानने के बाद **संभालनी**। कहीं कोई माया का समूह हमसे लूट न ले उसके लिए सत्संग में **दासानुदास भाव से सेवा व भक्ति** (चिन्तामणि हाथ में होने के बावजूद) करते रहना और हरेक का गुण लेते-लेते समागम करते रहना। यूँ ही सच्ची स्वरूपनिष्ठा और सम्यक् स्वरूपदर्शन होता है, अन्यथा नहीं होता और मानते हैं कि हुआ है वह केवल अज्ञानता ही गिनी जायेगी और वही दूर करने के लिए सत्संग है।

महाप्रभु शास्त्रीजी महाराज हमें श्रीजी जिस स्वरूप में जो विचरते हैं उनकी जैसी है वैसी पहचान करावें और अन्तर के दोष दूर करके सत्संग का महाकुसंग–एक दूसरे पर दोष थोपने का–टाल दें। हरेक सत्संगी अपनी-अपनी शक्ति के मुताबिक–एक ही मालिक की सेरे छाया में रह कर, स्वयं से होती सेवा भक्ति व मन, कर्म, वचन से प्रगट स्वरूपों का समागम कर लें–और फितूर छोड़ दे यही प्रार्थना।

इसके सिवा शांति मिलने वाली ही नहीं, क्योंकि करोड़ों दोषों से हम जो भरपूर हैं वह कौन जाने? इसलिए अपना ही अन्तर टटोलें और दोष जड़ से ही दूर करें, तो सत्संग अति निर्मल दिखाई पड़ेगा। इसलिए ऐसी चित्त शुद्धि स्वयं की ही करनी है, दूसरों की क्यों झंझट करें?

यही कर लें व चिन्तामणि संभालें रखें, नहीं तो दूसरे लूट लेंगे और हम भीख मांगते रह जाएंगे। उनको तो इस ब्रह्मांड की भी नहीं पड़ी और मन्दिरों की भी नहीं पड़ी। सब कुछ है वह सिर्फ एकांतिक भक्तों के लिए है ! फिर वो गृहस्थ हो या त्यागी–

उनको लाड पूरे करने और ब्रह्मज्ञान–अक्षरपुरुषोत्तम का फैलाने उनका जीवन है। उन्होंने तो वो पूरा किया अब करना हमें है।

हम अब कब समझेंगे ? नित्य, निमित्त, प्राकृत और आत्यंतिक प्रलय की दृष्टि से यह देह सौ वर्ष गिनते एक आँख के पलक झपकते पूरा हो जाएगा। यूँ गिना जाए तो इतने में इतना करना आसान है; वो भी नहीं होगा तो बाद में फिर मचेड़ कर करवायेंगे तब करना पड़ेगा। यह हम नजरों से देख भी रहे हैं ! फिर भी इस जीव का टेढ़ापन, ग्रन्थियाँ, स्वभाव क्यों बदलते नहीं होंगे?

सो सब प्रार्थना करें–जिससे कि गुरुजी हमें सत्संग का सुख दें। फलस्वररूप, भगवान का सुख–अनुभव कर पायें, ऐसा साक्षात सम्यक् दर्शन इसी देह से हो और कुछ अधूरापन न लगे...इस लोक में ही अक्षरधाम का स्वयं अनुभव करें और उसकी प्रतीति दूसरों को भी हो। ऐसी प्रभुता की झाँकी गोंडल में है, पर हमारे नाक बिगड़े हुए हैं–सो परम सुगन्ध की खुशबू तनिक भी नहीं ले पाते। 'जैसी हमारी दृष्टि, वैसा दर्शन और वैसा सुख'–इसमें जरा भी झूठ नहीं है। अनुभव की यह बात है। मानव तो माने नहीं, परन्तु गुरु समर्थ है वे मनवायेंगे और साक्षात् मूर्ति के सिवा दूसरी पंडिताई में, सिद्धि में, ज्ञान, भक्ति तप वगैरह के भाव में मन पिरोया जाता है उस मोह को दूर करायेंगे। जैसे हैं वैसे ही पहचाने, यही परम ज्ञान, परम सिद्धि, परम स्थिति व सुख और इन्हें संभाल रखना और सत्संग की महिमा समझना।

–प.पू. काकाजी महाराज

दिसम्बर, 1951

☐ ☐ ☐

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	27.9.91	शुक्रवार	ब्रह्मस्वरूप शास्त्रीजी महाराज का श्राद्ध
2.	दि.	2.10.91	बुधवार	श्रीजी महाराज का श्राद्ध
3.	दि.	3.10.91	गुरुवार	गुरुहरि योगीजी महाराज का श्राद्ध
4.	दि.	4.10.91	शुक्रवार	एकादशी, व्रत
5.	दि.	5.10.91	शनिवार	मू.अ.मू. गुणातीतानंद स्वामी का श्राद्ध व ब्र.स्व.प.पू. काकाजी महाराज का श्राद्ध
6.	दि.	8.10.91	मंगलवार	नवरात्रे प्रारम्भ
7.	दि.	17.10.91	गुरुवार	विजयादशमी, दशहरा, प्र.ब्र.स्व.प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की पार्षदी दीक्षा जयंती
8.	दि.	19.10.91	शनिवार	एकादशी, व्रत
9.	दि.	22.10.91	मंगलवार	शरद्पूर्णिमा, मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी का प्राग‌ट्य दिन।

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY,
A 103, Ashok vihar-III, Swaminarayan Marg, Kakaji Lane,
Delhi-110 052. (India) Tel. : 7229327, 7128838
Printed at **R.P. Printers,** Shahadra, Delhi-110032